ओ३म्

# गायत्री गौरव

[ गायत्री महामन्त्र पर सर्वथा मौलिक रचना ]

प्रणेता


## ईश्वरीप्रसाद 'प्रेम',

एम० ए०

साहित्य रत्न, सिद्धान्त शास्त्री

[ सम्पादक : 'तपोभूमि' ]



प्रकाशक

**सत्य प्रकाशन**

वृन्दावन मार्ग, मथुरा.

| द्वितीय बार | दीपावली २०२२ वि० | मूल्य |
|---|---|---|
| ३३०० | दयानन्दाब्द १४१ | १६ न० पै० |

# स म र्प ण
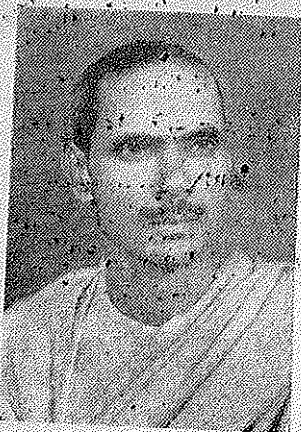
लुप्त प्रायः गायत्री-गौरव ( वेद महिमा ) को पुनः प्रतिष्ठित
करने वाले, समग्र धार्मिक, सामाजिक एवं राजनैतिक क्रान्ति
के अग्रदूत, उस प्यारे ऋषि ( महर्षि दयानन्द सरस्वती ) के
पश्चात् महामन्त्र गायत्री का व्यापक प्रचार करने वाले,
सामाजिक सुधार एवं सांस्कृतिक पुनरुत्थान के
लिये सर्वात्मना प्रयत्नशील, सरलता और
सादगी की सजीव मूर्ति, मेरे प्रति पिता
तुल्य स्नेह रखने वाले
**श्री पं० श्रीरामजी शर्मा, आचार्य**
के कर कमलों में,
प्रभु-प्रेरित ये भाव सुमन !
[ इस दृढ़ विश्वास के साथ कि गायत्री-तपोभूमि के आयोजन
में सम्मिलित कतिपय अवैदिक तत्वों को निकाल कर
वे महर्षि प्रदर्शित सत्य वेद-पथ के पूर्ण अनुयायी
बन सही अर्थों में गायत्री एवं मानवता
के महत्व को प्रकाशित करेंगे । ]

सादर समर्पित—

विनम्र बन्धु 'प्रेम'

ओ३म्

# गायत्री गौरव

❀ गायत्री मन्त्र ❀

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो
देवस्य धीमहि । धियो योनः प्रचोदयात् ॥

—यजु० अ० ३६। मन्त्र ३॥

यह प्रसिद्ध गायत्री मन्त्र है। पवित्र वेदों में कई बार यह मन्त्र आया है। ऋषियों और मनीषियों ने इसकी बड़ी महिमा गाई है। क्यों ? आइये, हम इस पर विचार करें।

परम कृपालु भगवान् ने असीम कृपा करके हमें यह मानव देह दी, भोगने के लिये यह संसार दिया और इस संसार को हम किस प्रकार भोगें, किस प्रकार संसार के व्यवहार और कर्त्तव्य-कर्मों को करें ताकि हम संसार के माध्यम से जीवन के अन्तिम उद्देश्य प्रभु-दर्शन को भी पा सकें, इसके लिये अपना पवित्र वेदज्ञान दिया।

वेद प्रभु की कल्याणी वाणी है। ज्ञान, कर्म, उपासना और विज्ञान के विधायक चारों वेदों में ईश्वर-जीव-प्रकृति-तत्व-

विवेचन,मानव जीवन के उद्देश्य और उसकी प्राप्ति के साधन विषयक् अमूल्य सन्देश सँजोये हुए हैं। पर जैसे एक विद्वान् वक्ता अथवा लेखक अपने भाषण अथवा लेख के विषय में यह कहे कि—"यदि मैं अपने भाषण अथवा लेख के समस्त आशय को एक वाक्य में कहना चाहूँ तो वह यह है"……।" इसी प्रकार मानो भगवान् कह रहे हैं कि चारों वेदों में दिये गये मेरे सन्देश को यदि मैं एक मन्त्र में कहना चाहूँ तो वह है—

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो
देवस्य धीमहि। धियो योनः प्रचोदयात् ॥

इसलिये यह गुरुमन्त्र है, महामन्त्र है। जिस सौभाग्य-शाली मानव के आचरण में इसका सङ्गीत गूंजता है, जो अपने आचरण द्वारा इस मन्त्र को गाता है, वह तर जाता है। अतः यह गायत्री मन्त्र है। गायत्री छन्द में होने से भी इसे गायत्री मन्त्र कहते हैं। यह गायत्री मन्त्र ईश्वरीय सन्देश का 'सूत्र' है। चारों वेद इस सूत्र की व्याख्या हैं। गायत्री वेद का 'केन्द्रीय विचार' है। पर जैसे किसी ग्रन्थ के केन्द्रीय विचार या सूत्र विचार को समझने के लिये लेखक की सम्पूर्ण रचना को पढ़ना आवश्यक है, बिना सम्पूर्ण रचना को मनोयोग पूर्वक पढ़े केवल सूत्र पाठ से लेखक का पूर्ण आशय हृदयङ्गम नहीं हो सकता। लेखक सूत्र के किस शब्द से क्या दृष्टिकोण आपको देना चाहता है यह सम्पूर्ण ग्रन्थ के पाठ से ही आप जान सकेंगे। सम्पूर्ण ग्रन्थ-पाठ से ही सूत्र का रहस्य आपको खुलेगा यदि केवल सूत्र-पाठ से ही काम चल सके तो लेखक का ग्रन्थ लेखन का परिश्रम ही व्यर्थ है। ठीक उसी प्रकार गायत्री मन्त्र का रहस्य जानने के लिये, मन्त्र के एक-एक पद में निहित दिव्य

और महान् सन्देश को समझने के लिए, चारों वेदों का श्रद्धा एवं मनोयोग पूर्वक पठन-पाठन, श्रवण-मनन परमावश्यक है। इसीलिये तो वर्त्तमान युग के प्रज्ञावान ऋषि ने हमें कहा था—
"वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना हमारा परम धर्म है।"

## गायत्री मन्त्र का महत्व

वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। बीज रूप में संसार की समस्त सत्य विद्यायें वेद में हैं, और वेद की शिक्षाओं का सार है गायत्री। यही गायत्री का महत्व है। गायत्री क्योंकर वेद की शिक्षाओं का सार है, यह जानना, इसके लिए गायत्री का अर्थ चिन्तन करना और तद्वत् आचार व्यवहार करना ही गायत्री की वास्तविक साधना है। यहाँ हम संक्षेप में गायत्री मन्त्र की व्याख्या द्वारा इस तथ्य को समझने का यत्न करेंगे।

## गायत्री मन्त्र की संक्षिप्त व्याख्या

(ओ३म्) यह परमात्मा का निज नाम है—जिस प्रकार कि किसी व्यक्ति का मुख्य या निज नाम एक होता है, यद्यपि परिवार में उसके स्थान, कार्य पद व्यवसाय आदि की दृष्टि से उसे अन्य अनेकों नामों से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिये गाँधी जी को हम महात्मा, बापू, राष्ट्रपिता, साबरमती का सन्त आदि विभिन्न नामों से पुकारते हैं, पर आप जानते हैं, कि ये सब नाम उनके गुण कर्म और स्वभाव के आधार पर गौणिक नाम हैं उनका निज नाम है—मोहनदास कर्मचन्द गान्धी। ठीक इसी प्रकार गुण, कर्म स्वभावानुसार परमात्मा के असंख्य नाम हैं। महर्षि दयानन्द ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ-

प्रकाश * में शिव, ब्रह्मा, विष्णु, महादेव, गणेश, अग्नि, वायु, आदित्य, नारायण आदि ईश्वर के सौ नामों की व्याख्या करते हुए बताया है कि ये सब अलग अलग देवता नहीं वरन् एक ही प्रभु के असंख्य नामों में से समुद्र में से बिन्दु के समान गुण कर्म स्वभावानुसार कुछ नाम हैं। उस महान् प्रभु का मुख्य नाम है—ओ३म्।

अतः गायत्री मन्त्र के चिन्तन करने वाले को सर्वप्रथम इस सचाई को हृदयङ्गम करना है कि 'बहुदेवतावाद' की मान्यता अशुद्ध है। ईश्वर एक है। 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति' उस एक को ही विद्वान् गुण कर्म स्वभावानुसार असंख्य नामों से पुकारते हैं। उसका निज नाम 'ओ३म् है—

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति तपा ँसि सर्वाणि च यद्वदन्ति,
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीमि
ओ३म् इत्येतत् ॥ कठोपनि० ॥

इस प्रकार सभी वेद-शास्त्र एक स्वर से एक मात्र ओ३म् की उपासना, प्रणव ( ओंकार ) जाप का ही विधान करते हैं। उस ओ३म् प्रभु के गुण कर्म वाची विभिन्न नामों से अलग अलग देवी देवताओं की कल्पना करके परस्पर लड़ना झगड़ना यह मानव की मूढ़ता ही है जिसका परिणाम केवल दुःख है।

अतः गायत्री मन्त्र का प्रथम सन्देश है—ईश्वर एक है और उसका मुख्य नाम 'ओ३म्' है। सच्चा गायत्री साधक वह है, जो 'बहुदेवता वाद' के जाल से मुक्त होकर एक मात्र ईश्वर

* इस अमूल्य मानव जीवन को सफल बनाने के इच्छुक व्यक्ति को महर्षि के इस महान् ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' का कम से कम एक बार अवश्य पारायण ( मनोयोग सहित अध्ययन ) करना चाहिये।

का उपासक है। पर ईश्वर की उपासना है क्या ? यह आगे
के पद में बताया है।

( भूर्भुवः स्वः = भूः + भुवः + स्वः । ) वह प्रभु सत्
+ चित् + आनन्द = सच्चिदानन्द स्वरूप है। जीव सत् + चित्
है। प्रकृति केवल सत् है। यह ईश्वर-जीव-प्रकृति-तत्व का
रहस्य इस पद में निहित है। जीव बीच में है। वह सत् + चित्
है। वह सदैव रहने वाला, अविनाशी अर्थात् अनादि सत्ता वाला
और चैतन्य है। प्रकृति सत् अर्थात् अनादि सत्ता वाली तो है,
पर चैतन्य नहीं। ईश्वर अनादि सत्तावाला + चैतन्यशक्ति युक्त
+ आनन्द गुण वाला है। ( ईश्वर, जीव, प्रकृति तीनों अनादि
हैं। यही वैदिक त्रैतवाद है। ) ईश्वर में तीनगुण, जीव में दो
गुण और प्रकृति में केवल एक गुण है। जीव में आनन्द गुण
का अभाव है। वह इसी के लिए भटकता रहता है। रात
दिन की दौड़ धूप उसकी इसी के लिये है। तो मानव-जीवन
का उद्देश्य है आनन्द की प्राप्ति, पर वह मिलेगा कहाँ ? जो
वस्तु जिसके पास है उसी से न वह मिलेगी ? अतः आनन्द
प्राप्ति का अर्थ है-ईश्वर-प्राप्ति। ईश्वर प्राप्ति ही मनुष्य
जीवन का उद्देश्य है। यह उद्देश्य ईश्वर के ( उप ) समीप
( आसन ) बैठने अर्थात् ईश्वरोपासना से ही पूरा हो सकता
है, प्रकृति-उपासना से नहीं। ईश्वर के अनन्त गुणों ( महिमा )
का विचार कर विनम्र हो उसका स्तुति-गान करना, उन गुणों
की प्राप्त्यर्थ आत्म-बल के लिए प्रभु से प्रार्थना करना और उन
गुणों को अपने में धारण करके, अपने आचरण में लाने के
लिये प्रयत्न करना ही ईश्वर की 'स्तुति प्रार्थना और
उपासना' है।

ईश्वर को प्यार करना ईश्वरोपासना है और प्रकृति को

प्यार करना प्रकृति-उपासना है। आज का मनुष्य प्रकृति-उपासक होने से दुःखी है। प्रकृति में आनन्द है कहाँ, उसके पास तो चैतन्यता भी नहीं। प्रकृति का उपासक गाँठ की चैतन्यता खोकर जड़मति हो जाता है। परन्तु प्रकृति 'हेय है, संसार मिथ्या है, स्वप्न है, सांसारिक वैभव एवं धनादि ऐश्वर्य व्यर्थहैं-ऐसी बात नहीं। (यह 'नवीन वेदान्तवाद' मन-घड़न्त और नितान्त असत्य है) हाँ प्रकृति साधन है, साध्य नहीं। पहले उस पर सवार होकर और अन्त में उसे छोड़कर ही जीव परमात्मा को पा सकेगा। नाव साधन है। नाव पर ही निरन्तर सवार रहने वाला कभी नदी पार नहीं जा सकेगा। पर वह साधन तो है ही, बिना उसके भी किनारा मिलने वाला नहीं है। सच्चा गायत्री-साधक पुरुष-प्रकृति के इस रहस्य को समझ कर आनन्द के एक मात्र अधिष्ठान सच्चिदानन्द स्वरूप प्रभु की उपासना करता है। इस प्रकार त्रैतवाद के विवेचन द्वारा प्रकृति को साधन बनाकर मानव जीवन का उद्देश्य ईश-प्राप्ति स्थिर करना यह गायत्री का अन्य महत्वपूर्ण सन्देश है।

सूत्र रूप में ईश्वर के नाम और स्वरूप कथन के पश्चात् आगे के पद में ईश्वर का कार्य बताया गया है।

( तत् सवितुः ) वह सविता है। जगत्-उत्पादक है। 'सवितः' इस पद द्वारा बताया कि ईश्वर का कार्य है— सृष्टि को उत्पन्न करना, उसे स्थित रखना और प्रलय करना। ईश्वर सृष्टि का रचयिता, पालन कर्त्ता और प्रलय कर्त्ता है। ईश्वर सृष्टि क्यों रचता है?—जीव के कल्याण के लिए। जीवात्मा इस सृष्टि-चक्र में उस परमदेव की महिमा निहार कर अन्तश्चक्षु से उस अदर्शनीय के दर्शन पाकर निहाल हो

सके, इसलिए। ऐसा प्रभु जिसका नाम 'ओ३म्' है, जिसका स्वरूप सच्चिदानन्द है, जिसका काम सृष्टि की उत्पत्ति स्थिति और प्रलय करना है-ऐसा प्रभु ही (वरेण्यम्) वरण करने योग्य, ग्रहण करने योग्य एवं उपासने योग्य है। उसी की और केवल उसी की उपासना करना योग्य है,अन्य की नहीं।

(भर्गः देवस्य धीमहि) उस वरणीय देव के शुद्ध तेज को हम धारण करें। उसके न्यायादि गुणों को हम धारण करें। यही ईश्वर की उपासना है*। पर इससे होगा क्या ?

(धियोयोनः प्रचोदयात्) हमारी बुद्धियाँ सन्मार्ग में प्रेरित होंगी। बुद्धि की निर्मलता में, मेधा बुद्धि की प्राप्ति में मानव जीवन की सफलता का रहस्य छिपा है। मनुष्य को पशु आदि योनियों से पृथक् करने वाला तत्व 'बुद्धि' है। बुद्धि की पवित्रता, ज्ञान की निर्मलता एवं शुद्धता उपर्युक्त क्रम से ईश्वरोपासना द्वारा ही सम्भव है। ज्ञान और उपासना (भक्ति) परस्पर पूरक हैं, विरोधी नहीं। जीवन रूपी क्षेत्र में हम कर्म बीज बोयें, उपासना के जल से उसे सींचें और ज्ञान की बाढ़ लगाकर उसकी रक्षा करें तभी सु-फल प्राप्त हो सकेंगे। ज्ञान, कर्म और उपासना का यह समन्वय, विवेक और श्रद्धा का यह सामञ्जस्य, बुद्धि और हृदय का यह सन्तुलन ही मानव जीवन का आनन्द तीर्थ है।

---

*यहां हमें ध्यान में रखना चाहिए कि ईश्वरीय गुणों को धारण करने से अभिप्राय जीव का ईश्वर बन जाने से नहीं है। स्वरूप से जीव कभी ईश्वर नहीं हो सकता। लोहा जब तक आग्नेय गुणों से युक्त रहता है, अग्निवत् होता है पर उससे पृथक् होते ही ठण्डा होने पर पुनः लोहा ही है।

ऊपर हमने गायत्री मन्त्र की संक्षिप्त व्याख्या समझी है उसके अनुसार हमें गायत्री मन्त्र से निम्न लिखित सन्देश मिलते हैं—

१. ईश्वर है। २. ईश्वर एक है–दो, तीन, चार या अनेक नहीं। ३. ईश्वर का मुख्य नाम 'ओ३म्' है, अन्य सभी नाम गुण कर्म स्वभावानुसार हैं। ४. एक मात्र ओ३म् का ही जप कर्त्तव्य है, अन्य का नहीं। ५. तीन अनादि सत्तायें हैं—ईश्वर, जीव और प्रकृति। ६. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, जीवात्मा सत् चित् और प्रकृति केवल सत् है। अतः जीवात्मा का उद्देश्य आनन्द के अभाव की पूर्ति अथवा सच्चिदानन्द स्वरूप प्रभु की प्राप्ति है। ७. ईश्वर–प्राप्ति में प्रकृति सहायक है, बाधक नहीं। ८. सृष्टि की उत्पत्ति, पालन और प्रलय करना--यह ईश्वर का कार्य है। ९. ईश्वर यह सभी कुछ जीव के कल्याण के लिये करता है। १०. एक मात्र ईश्वर ही वरणीय अथवा उपास्य-देव है। ११. ईश्वर के न्यायादि गुणों को धारण करना, अपने आचरण में लाना ही ईश्वर भक्ति है। १२. इस क्रमसे ईश-भक्ति का फल मेधा बुद्धि की प्राप्ति है जिससे साधक ज्ञान, कर्म और उपासना में समन्वय स्थापित करता है। १३. उक्त स्थिति को प्राप्त कर लेने पर साधक के कार्य-व्यापार प्रभु प्रेरणा से होने लगते हैं। वह उसका हो जाता है--यही जीवन का परम लक्ष्य है।

इस प्रकार गायत्री प्रभु का सूत्र-सन्देश है जिसकी विशद व्याख्या चारों वेद हैं। गायत्री तो वेद का प्रवेश द्वार है। जो द्वार पर ही ठिठक कर रह जाता है वह सत्य ज्ञान की प्राप्ति नहीं कर सकता। जब एक वेद मन्त्र 'गायत्री' में इतना अमृत भरा पड़ा है, जब प्रवेश द्वार इतना भव्य है तो भवन

कैसा होगा यह विचार कर जो वेद-सागर में गहरा पैठता है वही रत्न-राशि को निकाल पाता है। गायत्री-चिन्तन से प्रेरणा लेकर वेद के सम्यक् स्वाध्याय एवं वेदोक्त जीवन बिताने के द्वारा ही मानव इस जीवन-लक्ष्य को प्राप्त कर जीवन-मुक्त हो सकता है। 'नान्यः पन्था विद्यते ऽयनाय।'

**गायत्री का (ध्यान) चिन्तन कीजिए, जप 'ओ३म्' का कीजिये**

ऊपर के विवेचन से स्पष्ट है कि गायत्री-अनुष्ठान का अर्थ गायत्री के एक-एक पद में निहित ईश्वरीय सन्देश का ध्यान (चिन्तन) करने और उस दिव्य सन्देश को व्यावहारिक जीवन में कार्यान्वित करने से है। मन्त्र में विचार होते हैं, सन्देश होते हैं उनका चिन्तन-मनन किया जाता है। जप मन की एकाग्रता के लिए किया जाता है। उसके लिए अर्थ विचार पूर्वक ओङ्कार-जप* का विधान है। स्वयं महामन्त्र गायत्री में भी [धीमहि] ध्यान करने (चिन्तन करने) का ही स्पष्ट आदेश किया गया है, जप का कहीं नहीं

**गायत्री अनुष्ठान (चिन्तन) की प्रक्रिया**

यह तो हम समझ ही चुके हैं कि गायत्री मन्त्र वेद का सूत्र-संदेश अथवा केन्द्रीय विचार है। किसी ग्रन्थ अथवा वक्तव्य (भाषण) के आशय को भली प्रकार समझने के लिए यह अत्यावश्यक है कि आप लेखक या वक्ता के केन्द्रीय विचार को स्मरण रखें, उसका बार बार चिन्तन और मनन करें। ग्रन्थ लेखक वा वक्ता की आत्मा को पहचानने के लिए आप उस केन्द्रीय विचार में समस्त ग्रंथ या वक्तव्य को और समस्त ग्रंथ या वक्तव्य में केन्द्रीय विचार को देखने का प्रयत्न कीजिए। वेद प्रभु का वक्तव्य है। गायत्री मंत्र वेदों का केन्द्रीय विचार

---

* तस्य वाचकः प्रणवः तज्जपस्तदर्थभावनम् ॥ योग दर्शन

है। अतः परम-पिता परमात्मा और उसके आदेश को भली प्रकार जानने के लिए आप एकान्त, शान्त स्थान में सुखासन से बैठकर प्रथम अर्थ विचार पूर्वक प्रणव-जाप (ओङ्कार जप) द्वारा मन की एकाग्रता सम्पादित कीजिए। पश्चात् महामंत्र गायत्री के एक-एक पद में सन्निहित दिव्य वैदिक संदेशों को गहराई में उतरिये। अनुभव कीजिए कि आप शक्ति के स्रोत प्रभु के समीप ही नहीं उस विश्वधात्री माँ की गोद में बैठे हैं और तब आत्म-बल युक्त होकर गायत्री के एक-एक पद में गुँथी हुई दिव्य भावनाओं को अपने व्यावहारिक जीवन में उतारने का सत्य संकल्प कीजिए। यदि आपने वेद स्वाध्याय किया है जो गायत्री के सच्चे साधक के लिए अनिवार्य है तो गायत्री के एक-एक पद में वेद को देखिये और वेद की पावन ऋचाओं में गायत्री को। आत्म विभोर हो आप ऐसा बार बार कीजिए। जितनी गहरी डुबकी आप लगा सकेंगे उतने ही उज्ज्वल रत्न आप पा सकेंगे। यहीं गायत्री का सच्चा अनुष्ठान है, यही गायत्री का वास्तविक चिन्तन है और यही है गायत्री की सच्ची साधना। **इसमें समय, संख्या का उतना महत्व नहीं है जितना तन्मयता और गहरा डूबने का।**

## गायत्री साधना (अनुष्ठान) का फल

किसी भी शुभ या अशुभ कर्म का फल अवश्य होता है। जो काम जितना बड़ा होता है उसका फल भी उतना ही बड़ा होता है। गायत्री साधना एक महती साधना है अतः उसका फल भी महान् है। यों तो प्रत्येक सत्कर्म की क्रिया में ही फल छिपा रहता है। सत्कर्म करते हुए कर्त्ता को जिस उल्लास, उत्साह और लक्ष्य प्राप्ति की आशासे उत्पन्न आनन्द की अनुभूति होती है वह स्वयं ही सत्कर्म का कम फल नहीं है। गायत्री साधक को भी साधना काल में अपने प्यारे प्रभु की गोद में बैठे

हुए वेद-सागर में डुबकियाँ लगाते हुए जिस अलौकिक आनन्द की अनुभूति होती है, वह वर्णन का विषय है कहाँ ? गूँगा गुड़ का स्वाद बतावे तो कैसे बतावे ? महाकवि तुलसी ने ऐसे ही प्रसंग के लिए तो कहा है–'गिरा अनयन, नयन बिनु वाणी'

पहाड़ की चढ़ाई चढ़ने वाला प्रत्येक चढ़ाई के पड़ाव पर तो आत्म गौरव और आत्म-सुख का अनुभव करता ही है पर जब वह पहाड़ की चोटी––अपने लक्ष्य को पा लेता है तब उसके आनन्द का क्या ठिकाना ! जब साधक डुबकियाँ लेकर बाहर निकलता है तो उसका आत्मा कितना उन्नत, आत्म–बल कितना जाग्रत और निखरा हुआ, मनः शक्ति कितनी प्रबुद्ध, मस्तिष्क कितना शीतल और स्पष्ट, हृदय कितना सरस और पवित्र, बुद्धि कितनी निर्मल और विकसित तथा शरीर कितना स्वस्थ और सन्तुलित होगा। क्यों न हो, उसने वेद-सागर में जो डुबकी लगाई है। शक्ति के स्रोत, आनन्द के भण्डार ओम् प्रभु से जो उसका सीधा सम्बन्ध जुड़ गया है। (बीच में कोई एजेण्ट नही, कोई दलाल नहीं) ऐसे साधक के लिए संसार में क्या-कुछ है जिसे अप्राप्य कहा जा सके। सभी कुछ उसके लिए हस्तामलकवत् होता है। ऐसा साधक जब अपने दैनिन्दिन जीवन कार्यों को प्रारम्भ करता है तो उसमें आने वाले द्वन्द्वों से वह घबराता नहीं। साधना के फल रूप प्राप्त मेधा बुद्धि से वह उनमें समन्वय स्थापित करता है। वह जिस दिशा में आगे बढ़ता है दिशायें उसे मार्ग देती हैं। उसकी सन्मार्ग गामिनी बुद्धि साँसारिक वैभव और सफलताओं को उसके चरणों में लाकर रख देती है। गायत्री का सच्चा साधक सबका मित्र और अजातशत्रु हो जाता है। जिधर उसकी शान्त-स्निग्ध दृष्टि पड़ती है साक्षात् क्रोध भी मोम होकर पिघिल जाता है। उसके

जीवन में श्रद्धा और विवेक, हृदय और मस्तिष्क का कल्याण-कारी समन्वय होता है। लोक और परलोक, प्रत्यक्ष और परोक्ष तथा जीवन जगत् में वह सामञ्जस्य स्थापित करने में समर्थ हो जाता है। उसकी श्रद्धा कभी अन्धी नहीं होती। (श्रद्धा का अर्थ ही है सत्+धा अर्थात् जिसका आधार सत्य हो) उसका विवेक सदैव जाग्रत रहता है। क्या ? क्यों? और कैसे ? इन प्रश्नात्मक चिन्हों की कसौटी पर कस कर ही वह किसी सचाई में अपनी श्रद्धा को जोड़ता है। जीवन भर वह सत्य की शोध करता है और उसमें अपनी भावनात्मक श्रद्धा का पुट देता जाता है। वह बुद्धिजीवी होता है पर कुतर्क और पाण्डित्य-प्रदर्शन का आश्रय नहीं लेता। उसके समस्त कार्य-व्यापार ईश्वरार्पित बुद्धि से होते हैं। प्रभु-प्रेरणा उसके जीवन का सम्बल बन जाती है। हर काम को मानो वह भगवान् की आज्ञा से करता है, हर कदम मानो वह उसकी (प्यारे प्रभु की) राह पर चलने के लिये उठाता है। उसका जीवन यज्ञीय बन जाता है। एक शब्द में वह उसका होकर जीता है। यही गायत्री के चिन्तन, अनुष्ठान अथवा साधना का फल है।

## गायत्री साधना अथवा वेद साधना का मानव मात्र को अधिकार है.

निश्चय ही उपर्युक्त क्रम से गायत्री की साधना हर किसी के वश की बात नहीं। सच तो यह है कि यह विरले शूरमाओं का ही भाग है। हाँ, गायत्री साधना और वेद स्वाध्याय का अधिकार सबको है। वेद तो प्रभु की कल्याणी वाणी है और गायत्री वेद का एक प्रसिद्ध मन्त्र है। जिस प्रकार ईश्वर प्रदत्त वायु, जल एवं प्रकाशादि सभी के उपयोग के

लिये हैं। [ यह दूसरी बात है कि कोई अन्धेरे में ही रहना पसन्द करे और प्रकाश से लाभ न उठावे, ] उसी प्रकार प्रभु का अमर सन्देश, वेदज्ञान, भी सबके उपयोग के लिये है। मानव मात्र को वेद स्वाध्याय एवं गायत्री चिन्तन का अधिकार है। 'स्त्री और शूद्रों को वेदाधिकार नहीं' ऐसा कहना उचित नहीं है। शूद्र तो उसे कहते हैं जो पढ़ाने से भी न पढ़ सके अतः उसको तो वेदों में गति होने का प्रश्न ही नहीं उठता। हाँ, जन्म से किसी को शूद्र मानकर आप उसे वेदाधिकार से वञ्चित नहीं कर सकते और यदि करते हैं तो आप न्याय नहीं करते।

जहाँ तक स्त्रियों को गायत्री-चिन्तन अथवा वेद-स्वाध्याय से वञ्चित रखने का प्रश्न है यह तो और भी दूषित एवं त्याज्य मनोवृत्ति है। गायत्री साधना अथवा वेद साधना का सबसे बड़ा फल बुद्धि-परिष्कार है। बुद्धि ही एक ऐसा तत्त्व है जो मनुष्य और अन्य योनियों में अन्तर करता है। उसको परिष्कृत और पवित्र बनाने के अवसर से वञ्चित करना तो मनुष्य जीवन की उपयोगिता और सबसे बड़े लाभ को छीन कर किसी को पशुवत् जीवन बिताने के लिये बाध्य करना है। एक मनुष्य दूसरे मनुष्य के साथ इससे बड़ा अन्याय और क्या कर सकता है। फिर मातायें तो राष्ट्र जीवन की धुरी हैं। 'माता निर्माता भवति' मातायें राष्ट्र को निर्माण देती हैं। जिस देश की जैसी मातायें होंगी, उसके वैसे ही युवक होंगे। मातायें हमारे राष्ट्र जीवन की झाँकी हैं। हमारा यह देश जब समुन्नत था, जगद्गुरु के सिंहासन पर शोभित था तब हमारी मातायें कैसी पण्डिता और विदुषी होती थीं। मातायें तब वेद को ऋचाओं की ऋषिकायें हो गई हैं। आज

स्वतंत्रता की इस प्रभात वेला में, अपने नवजात राष्ट्र को सही निर्माण देने के लिए और विश्व में सच्ची शान्ति लाने के लिए हमें इस प्रकार की कुबुद्धि और दुष्प्रवृत्ति को त्याग देना चाहिए जिसके आधार पर माताओं अथवा किसी भी व्यक्ति को प्रभु के अमर संदेश से वञ्चित रखने का दुस्साहस किया जाता है।

## गायत्री का मिथ्या माहात्म्य पाप को बढ़ाता है

सामान्य मनुष्य का स्वभाव दुर्बल होता है वह अपनी दुर्बलताओं को छिपाने के लिए किसी न किसी का सहारा ढूंढ़ता है। दुर्बल स्वभाव का व्यक्ति हाकिम से सीधा मिलने में कतराता है वह चपरासी अथवा बीच के अन्य किसी न किसी व्यक्ति का सहारा टटोलता है। आध्यात्मिक क्षेत्र में मानव के स्वभाव की इस दुर्बलता का लाभ उठाने के लिए चतुर लोगों ने अनेकों देवी देवताओं, गुरुओं, पैगम्बरों, एजेण्टों और दलालों की सृष्टि कर डाली है। यह भ्रष्टाचार धार्मिक क्षेत्र में सम्भवतया सबसे अधिक है। मिथ्या माहात्म्य भी इसी प्रकार का भ्रष्टाचार है।

हिमालय ने एक जागरूक और सुदृढ़ प्रहरी की भांति सदैव हमारे देश की रक्षा की है। हिमालय से और भी बड़े-बड़े लाभ भारत को हैं। गङ्गा, भारत की सबसे महत्व-पूर्ण नदी है। भारत, विशेषत: उत्तर भारत के निर्माण, विकास और अभ्युत्थान में गङ्गा की देन असन्दिग्ध है। फिर गङ्गा ऐसे वनों और स्थानों में से बहकर आती है जहाँ की जड़ी बूटियों और औषधों के सम्मिश्रण से गङ्गा-जल अत्यधिक निर्मल और शीतल होने के साथ ही बड़ा आरोग्यप्रद हो जाता है। अत: यह स्वाभाविक ही है कि कवि-हृदय इन उपकारी तत्वों का प्रशस्ति-गान करे। कवि का हृदय संवेदन-

शील होता है। वह चेतन-अचेतन सभी से आत्मीयता स्थापित करता है। कविरत्न 'दिनकर' की 'हिमालय के प्रति' कविता मे यह आत्मीय भाव कैसा मुखरित हो उठा है उसका एक अंश देखिए—

**मेरे नगपति मेरे विशाल !**

साकार दिव्य गौरव विराट्, पौरुष की पुञ्जीभूत ज्वाल।
मेरी जननी के हिम किरीट, मेरे भारत के भव्य भाल॥

× × ×

जिसके द्वारों पर खड़े क्रान्त, सीमापति तूने की पुकार।
पद दलित इसे पीछे करना पहले ले मेरा सिर उतार॥

× × ×

तो यह सब स्वाभाविक है,उचित है। इससे पता लगता है कि मनुष्य कृतज्ञ स्वभाव वाला है, कृतघ्न नहीं। यह भी ठीक है कि प्राचीन काल में गंगा आदि नदियों के शान्त तटों पर अथवा हिमालय की कन्दराओं में ऋषि-महर्षि अपने आश्रम बना कर योग साधन आदि करते थे। गृहस्थी जन जब इन आश्रमों में पहुँचते थे तो गंगा जल के सेवन एवं स्नानादि से आरोग्य लाभ कर स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मन से ऋषि-चरणों में बैठ कर जीवन की गुत्थियों को सुलझाते थे। यहाँ इन्हें एक नया प्रकाश और मार्ग प्रदर्शन मिलता था। यहाँ तक तो सब ठीक ही है। यह माहात्म्य स्वीकरणीय है।

पर यदि कोई यह कहे कि गंगा में स्नान करने से अथवा अमुक स्थान पर जाने से जन्म-जन्मान्तर के पाप कट जाते हैं। यही नहीं सात पीढ़ी और इक्कीस पीढ़ी तक तर जाते हैं। किन्हीं किन्हीं ने तो जाने की आवश्यकता भी नहीं रखी। ४०० कोस से भी केवल 'गंगा-गंगा' ऐसा कह देने से सारे पापों

के फल से छुट्टी मिल जाती है। यह सब 'मिथ्या माहात्म्य' है। इन महा मिथ्या माहात्म्यों ने उन तत्वों के वास्तविक महत्व और उपयोगिता को तो समाप्त किया ही है, दुर्बल स्वभावी मनुष्य को पाप करने के लिये खुली छूट और प्रोत्साहन भी दिया है। संसार के किसी देश में ईश्वर और धर्म की इतनी चर्चा नहीं होती जितनी भारत में। किन्तु इन सस्ते नुसखों के आविष्कार से हमारा यह अभागा देश चरित्र और नैतिकता की दृष्टि से संसार में सम्भवतया सब से गिरा हुआ है।

आज भारत का धर्म स्थान, पानी और पैसे में या फिर चौका और चूल्हे में जाकर टिक गया है। 'काशी में मरने से मुक्ति मिल जायगी।' 'गङ्गा या जमुना में अमुक तिथि को स्नान करने से सारे पाप कट जायेंगे।' 'सत्य नारायण की कथा कहला कर चवन्नी दक्षिणा देने से यमराज के दूत नहीं सतायेंगे'— कैसी विडम्बना, कैसी छलना कैसी धोखा देही है! यह कैसा धर्माभास आज भारत में चल रहा है? दिखाने में जो जितना धर्मात्मा, आचरण और व्यवहार में वह उतना ही पतित। वस्तुत: यह ढकी हुई नास्तिकता है जो प्रकट नास्तिकता से भी बुरी और घृणित है। यह ढकी हुई नास्तिकता ही प्रकट नास्तिकता को जन्म देती है। हमारे देश की नई पीढ़ी में प्रकट नास्तिकता की जो लहर चल रही है उसके मूल में यही मिथ्या माहात्म्य परक ढकी हुई नास्तिकता है।

वस्तुत: किसी व्यक्ति अथवा वस्तु का जितना महत्व है उससे बहुत बढ़ा चढ़ा कर कहना उसका उपहास करना और विचार शीलों की दृष्टि में उसे गिराना है। हमें अत्यधिक खेद है कि आज यज्ञ और गायत्री के नाम पर भी मिथ्या माहात्म्य के किस्से घड़े जा रहे हैं। गायत्री के सच्चे साधकों को इससे अवश्य ही कष्ट होगा।

## गायत्री के नाम पर इस सौदे बाजी से बचिये !

इतिहास में हमने पढ़ा था कि कभी रोमका पोप स्वर्ग के टिकट बेचता था। पर वहाँ अब उजाला हो गया। वहाँ की जनता जाग गई। पर हमारे इस अभागे देश में आज भी स्वर्ग के टिकिट बेचे जाते हैं। अभी तक हम सुनते थे—गीता के अमुक अध्याय के पाठ मात्र अथवा श्रवण मात्र का अमुक फल है। रामायण या भागवत के पाठ मात्र से अमुक लाभ होगा। राम नाम या कृष्ण नाम की इतनी इतनी मालायें फेरने से इतना इतना लाभ होगा। पर आज हमें यह भी सुनाई पड़ रहा है—'गायत्री का इतना जप करने से इतना धन मिलेगा। इतना जप करने से सन्तान मिलेगी। इतना जप करने से विवाह हो जायगा और इतना जप करने से मुकदमे में जीत हो जायगी।" आज हम पढ़ रहे हैं और सुन रहे हैं—'गायत्री के जप से अमुक व्यक्ति बिना परिश्रम किये परीक्षा में उत्तीर्ण हो गया, गायत्री के ध्यान से अमुक व्यक्ति साइकिल की टक्कर से बच गया, अमुक व्यक्ति ओलों की वर्षा में खड़ा रहा अन्य सारे लोग ओलों की चोटों से घायल हो गये किन्तु गायत्री के जप से उस पर एक छार भी नहीं पड़ी' क्या यह गायत्री का महत्व दर्शन है या उसकी मखौल है ? मित्रो, जरा सोचिये क्या इससे देश का चरित्र उठेगा ? जबसे हमने सत्य धर्म की राह को छोड़ा है हमारे यहाँ धर्म के नाम पर चलने वाले सारे कार्य व्यापार इसी लोभ लीला या सौदे बाजी के आधार पर चलते आ रहे हैं। धार्मिक अनुष्ठानों और क्रियाओं का हमारे आचरण से जैसे कोई सम्बन्ध ही नहीं रह गया है। इन मान्यताओं से आलस्य, पुरुषार्थ हीनता, पाप और पाखण्ड ही

फैलता है। हमारे देश की हजारों वर्षों की लम्बी गुलामी के कारणों में से ये मान्यतायें प्रमुख कारण हैं।

हमारे प्यारे मित्रो, राम नाम या कृष्ण नाम के स्थान पर आपने गायत्री मन्त्र का जप किया, यह तो ठीक, पर यदि इस अनुष्ठान का आधार वही सौदेबाजी रही तो आपने अब तक बच हुए यज्ञ और गायत्री मन्त्र की मिट्टी कूटने का पाप ही अपने जिम्मे लिया है। मित्रो, खूब समझिये कि किसी से माँगना और बात है और रिश्वत देना और बात। ईश्वर से माँगिये, अवश्य माँगिये। माँ से नहीं माँगेंगे तो माँगेंगे किससे। 'खटखटाओ खुलेगा, माँगो मिलेगा' पर याद रखिये ईश्वर को रिश्वत देकर रिश्वतखोर मत बनाइये। 'ऐसा करने से वैसा मिलेगा' अथवा 'वैसा पाने के लिये ऐसा करो।' यह दोनों शर्तें रिश्वत के रूप हैं।

मित्रो, कम से कम गायत्री के नाम पर इस सौदे बाजी और इसके प्रचार को रोकिये। इस पाप से स्वयं बचिये और दूसरों को बचाइये।

## गायत्री साधन है साध्य नहीं !

गायत्री साधना का महत्व और उसका फल बताते हुए हम ऊपर विचार कर चुके हैं कि गायत्री की साधना, उसका सम्यक् चिन्तन और मनन प्रभु-प्राप्ति का मुख्य साधन है। गायत्री साधना वस्तुत: वेद साधना का आरम्भ और अन्त है। और जिस भाग्यशाली मानव ने इस रहस्य को समझकर वेद साधना की है, वेदानुकूल आचरण किया है वह निश्चय ही जीवन के चरम लक्ष्य आनन्द प्राप्ति या ईश-प्राप्ति को पा

लेता है। पर हमें एक क्षण के लिए भी यह नहीं भूलना है—"समस्त वेद जिसकी अर्चना करते हैं, तपस्वी जिसका गुण-गान करते हैं और जिसको पाने के लिए ब्रह्मचर्य का आचरण किया जाता है, वह एक मात्र 'ओ३म्' अर्थात् परमात्मा है।" वेद साधना, गायत्री चिन्तन ये सभी ईश-प्राप्ति के साधन हैं। साध्य तो एक मात्र परमात्मा है। अतः 'गायत्री उपासना' यह वाक्य भ्रामक और अशुद्ध है। गायत्री-उपासना नहीं ईश्वरोपासना हमारा अभीष्ट है। गायत्री साधन है, साध्य नहीं साधन को ही साध्य मानने वाला कभी साध्य को नहीं पा सकता। साध्य की प्राप्ति में साधन सहायक होता है, यही उसका उपयोग है। पर जब हम साधन को ही साध्य मान बैठते हैं तो साध्य के मिलने का सुयोग ही नहीं मिल सकता। इस प्रकार वह साधन, साधक ( सहायक ) न होकर साध्य के मिलने में बाधक हो जाता है। ईश्वर के स्थान पर गायत्री ( साधन ) की उपासना ईश्वर ( साध्य ) के मिलने में बाधक हो जाती है।

## गायत्री को एक अलग देवता मत बनाइये।

भगवान् श्रीराम और कृष्ण का गौरव हमने उन्हें ईश्वर बनाकर समाप्त कर दिया, आज हम उनसे कोई प्रेरणा, स्फूर्ति नहीं ले पाते। गायत्री को एक मूर्त्त देवता बनाकर हम गायत्री महामन्त्र की मानव-जीवन के लिये महती उपयोगिता को समाप्त कर देते हैं। एक ईश्वर के स्थान पर पहले से ही यहाँ सैकड़ों, सहस्रों देवी देवताओं का जाल पुरा हुआ है जिससे यह ईश्वर का प्यारा मानव समाज विभिन्न मत-मतान्तरों में छिन्न-भिन्न हुआ दुःख भोग रहा है। फिर गायत्री मन्त्र तो

स्वयं हमें सन्देश दे रहा है—"ईश्वर एक है। बहु देवतावाद की मान्यता अशुद्ध है।" यह हमारी कैसी विचित्र गायत्री-भक्ति है जो हम उसके सन्देश के विरुद्ध उसे एक और नया देवता बनाये दे रहे हैं। यह तो ठीक वैसा ही है जैसा आजकल लोग गीता, महाभारत और रामायण की सवारियाँ निकालते हैं; बड़ा शोर और जय-जयकार करते हैं। पर इन महान् ग्रन्थों का क्या सन्देश है इस पर ध्यान नहीं देते। गायत्री को देवता बनाकर उसकी उपासना साधन की उपासना होगी जो हमें हमारे साध्य ( ईश्वर ) की उपासना से पीछे हटायेगी, उसमें बाधक होगी।

हमारा विनम्र निवेदन है कि 'बहुदेवतावाद' से छिन्न विछिन्न, जर्जरित और शोषित भारत पर एक और नये देवता का भार लादना उचित न होगा। मानव के विकास में 'बहु-देवतावाद' एक बड़ा रोड़ा है, विचारशीलों को इसे हटाना चाहिये न कि एक और नया रोड़ा अड़ाना।

## गायत्री को मूर्ति सम्भव नहीं

हम अभी निवेदन कर चुके हैं कि गायत्री ईश्वर-प्राप्ति का एक मुख्य साधन है। वह ईश प्राप्ति में सहायक है। पर इस महामन्त्र को एक कल्पित देवी का मूर्त्त रूप देकर हम गायत्री को ईश प्राप्ति में बाधक बना रहे हैं। मूर्ति-पूजा एक आध्यात्मिक महारोग है। यह साधक को कभी ईश्वर से नहीं मिलने देता।

हमारे कुछ मित्र कहते हैं कि मूर्ति द्वारा हम गायत्री के महत्व और साधना के प्रकारों को कल्पित संकेतों द्वारा स्पष्ट करने का प्रयत्न करते हैं। इससे साधकों को सुविधा हो जाती है जैसे कि श्याम पट ( Black Board ) पर चित्रों द्वारा हम ज्यामिति के प्रश्न हल करते हैं। अपने इन कृपालु मित्रों से हम विनम्र निवेदन करना चाहते हैं कि यदि 'गायत्री मन्त्र' के चित्र निर्माण में ईमानदारी से आपका यही दृष्टिकोण है तो फिर उसे 'गायत्री माता' या 'गायत्री देवी' के रूप में एक देवता के रूप में क्यों उपस्थित किया जाता है। फिर यह पूजा-पुजापा, मत्था टेकने, भोग-प्रसाद तथा सजावट-शृंगार का क्या अर्थ ? और सच बताइये क्या मन्दिर में जो व्यक्ति रहता है उसे 'पुजारी' कहकर नहीं पुकारा जाता, क्यों ? यदि आपका आशय वही है जैसा कि आप बतलाते हैं तो इतना काम तो चित्र से चल सकता था। जैसे कि हम भारत माता का चित्र बनाते हैं। वह भी काल्पनिक ही है। भारत का स्वरूप निदर्शन ही उसका उद्देश्य है, ठीक है। महापुरुषों के चित्र हम लगाते हैं, ठीक है। अच्छा ही है यह, आपत्ति का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। आपत्ति तो वहाँ उठती है जब इन चित्रों को ईश्वर के स्थान पर पूजते हैं, माथा टेकते हैं, भोग-प्रसाद चढ़ाते हैं तथा सौदेबाजी का आधार बनाते हैं।

आज हमारा देश स्वतन्त्र है। सदियों की गुलामी से देश जाग रहा है। राजनैतिक स्वाधीनता के पश्चात् देश में सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्र में बुद्धि-स्वातन्त्र्य का कार्य अभी शेष है। आज बड़ी तेजी से भौतिक निर्माण के कार्य देश में चल रहे हैं, पर जिसके लिए यह सब निर्माण हो रहा है उस

मानव के निर्माण का कार्य अभी शेष है। सांस्कृतिक कार्य-क्रम के नाम पर जो कुछ हो रहा है वह देश की स्वस्थ प्राचीन परम्पराओं से मेल नहीं खाता। इस प्रकार देश के सांस्कृतिक पुनरुत्थान का कार्य भी शेष है। देश का नैतिक स्तर पिछले १८ वर्षों में और गिरा है। इस दिशा में 'चरित्र निर्माण आन्दोलन' के रूप में निःसंदेह एक संगठित प्रयत्न की महती आवश्यकता है। आज से लगभग १०० वर्ष पूर्व मथुरा ने एक प्रकाश दिया था। वर्तमान युग के क्रान्तिदर्शी महर्षि ने आज से ९० वर्ष पूर्व 'आर्य समाज' की स्थापना इन्हीं सपनों को लेकर की थी। निःसंदेह आर्यसमाज ने इस दिशा में जो किया वह इतिहास का एक स्वर्णिम और उज्ज्वल अध्याय बन गया है। पर आज यह अग्नि कुछ ठण्डी पड़ने लगी है। राष्ट्र के सच्चे हित चिन्तकों को इसे अपनी जीवनाहुतियों द्वारा पुनः प्रदीप्त करना है।

इधर पिछले कुछ समय से मथुरा से ही एक और पुण्य अभियान 'यज्ञ और गायत्री' के सन्देश को लेकर आरम्भ हुआ है। धार्मिक रूढ़ियों तथा सामाजिक विषमता के कुचक्र में ग्रस्त ईश्वर की राह से दूर जा रहे आज के भारत को 'यज्ञ और गायत्री' का कल्याणकारी और दिव्य सन्देश निःसन्देह अमोघ औषध सिद्ध होगा पर हमें यह भूल नहीं जाना है कि अच्छी से अच्छी औषध भी यदि उसका अनुपान गलत हो तो विष का काम कर सकती है, शीशी का लेबिल बहुत सुन्दर है, पर उससे तो मन ही बहल सकता है लाभ या हानि तो शीशी के अन्दर जो कुछ है उस पर निर्भर है।

निस्सन्देह 'गायत्री तपोभूमि, मथुरा' के आयोजन में कई अत्युपयोगी कार्यक्रमों को सम्मिलित किया गया है। हजारों उन नर-पुत्रों और देवियों को, जिन पर धर्म के ठेकेदारों ने कड़े प्रतिबन्ध लगा दिए थे, एक स्वर से पवित्र गायत्री मंत्र का उच्चारण करते हुए देखकर कौन हृदय-हीन है जिसे सच्ची प्रसन्नता नहीं होगी ? जन्ममूलक जात पाँत, छूआछूत और चौका-चूल्हे के मिथ्या बन्धनों को छोड़कर सामाजिक समता का मंत्र हम यहां गूँजता पाते हैं। मृतक भोज, पशु-बलि, आदि अन्य सामाजिक एवं धार्मिक कुरीतियों से संघर्ष करने का कार्यक्रम भी इस पावन आयोजन का एक अङ्ग है। 'चरित्र निर्माण' का आह्वान भी हमें यहाँ मिलता है। किन्तु इस इतने समुन्नत, कार्यक्रम के साथ गायत्री महामन्त्र को एक देवता बनाकर, उसकी कल्पित मूर्ति घड़ कर और उसकी पूजा पुजापे का जो भ्रामक और अनर्थकारी क्रम चला रखा है वह अमृत में विष के समान होने से सभी उत्तमताओं पर पानी फेर कर उसे विचार शीलों के लिए त्याज्य बना देता है। यह तो पुरानी शराब को नई बोतल में नये लेबल के साथ देने के समान ही हो जाता है, जिससे कई बार समझदारों के भी धोखे में आ जाने की सम्भावना बढ़ती है।

ईश प्राप्ति के महान् साधन इस पवित्र गायत्री मंत्र को साधन से साध्य कोटि में ले जाकर उसे एक कल्पित मूर्तिमान् देवता के रूप में उपस्थित कर किस प्रकार हम इस महामंत्र के वास्तविक लाभ से मानव समाज को वञ्चित रखने का पाप अपने सिर लेते हैं, इस पर हम पीछे विचार कर चुके हैं। अतः 'गायत्री तपोभूमि मथुरा' के संयोजकों से हमारा विनम्र निवेदन है कि यदि वे चाहते हैं कि देश के विचारशील वर्ग

का सहयोग उन्हें मिले तो एक बार अपनी सम्पूर्ण योजना पर नये सिरे से विचार करें। यदि उन्होंने ऐसा किया और इसमें से विषैले तत्वों को निकाल दिया तो वह दिन दूर नहीं है जब यह पुण्य प्रयास भारत-उद्धार का गौरव प्राप्त कर सकेगा। अन्यथा हमारा यह निश्चित विश्वास है कि कुछ समय चमक-चमका कर शीघ्र ही यह सब एक 'पाखण्ड प्रक्रिया' से अधिक कुछ नहीं रहेगा।

अन्त में सर्वान्तर्यामिन् प्रभु से विनय है कि वह हम सबको ऐसी शक्ति-भक्ति प्रदान करे जिससे हम गायत्री महा-मंत्र में दिए गये उसके महान् सन्देश को हृदयंगम कर सकें। उस दिव्य सन्देश को हम अपने आचरण में ला सकें। गायत्री का पवित्र संगीत हमारे आचरण में गूँजता रहे जिससे हम स्वयं तर सकें और संसार को तरने के सत्य-पथ का सन्देश दे सकें।

सत्य के साथी विवेकी मृत्यु को तर जायंगे।
ज्ञान गीता गाय भोलों का भला कर जायंगे॥
मूढ़ हठधर्मी अँधेरे में पड़े मर जायंगे।
साथ अपने दूसरों को भी डुबो कर जायंगे॥
पातकी पामर प्रमादी पाप से डर जायंगे।
साहसी सज्जन सचाई सीसधर तर जायंगे॥

—महाकवि 'शंकर' जी

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्॥

इत्योमशम।

वैदिक प्रेस, वृन्दावन मार्ग मथुरा।